1966G Contemplation for focus

Eki-Bhav Stotr (In Sanmati Sandesh, 1966)

एकीभाव स्तोत्र

लेखक–श्रीयुत पं० हीरालालजी सिद्धान्त शास्त्री व्यावर

भक्तामर, कल्याणमन्दिर, एकीभाव विषापहार और भूपाल चतुर्विंशतिका इन पंच स्तोत्रोंमें यदि भावोंकी विशुद्धिकी दृष्टि से देखा जाय, तो एकीभाव स्तोत्रका सर्वोच्च स्थान है। यदि एकाग्र होकर आनंदाश्रु बहाते हुए इसका पाठ किया जाय, तो सचमुच भव–भव का संचित पाप मल पाठ करते करते गल कर बाहिर निकल जाता है, ऐसा प्रत्येक पाठ कर्त्ताको अनुभव होता है। इसके रचयिता को सर्वाङ्ग में कोढ था, पर "तत्किं चित्रं जिन वपुरिदं यत्स्वर्णीकरोषि" इस चौथे ही काव्य की रचना के साथ ही श्री वादिराज महाराज का कोढी शरीर सुवर्ण के समान चमकने लगा और कोढ दूर होगया। कथा तो केवल शरीर के बाह्य चमत्कार को ही प्रकट करती है, अन्तर का जो भव–भव का संचित पाप मल धुलकर उनका आत्मा जो परम निर्मल हुआ, उसे उनके सिवाय दूसरा कौन जानता और अनुभव करता है ?

एकीभाव के भावों की उज्वलता देख संस्कृत भाषा के नहीं जानने वाले लोगों के हितार्थ पं० भूधरदासजी आदि विद्वानों ने उसे हिन्दी भाषा के पद्यों में अनुवाद किया। भूधरदासजी का भाषा एकीभाव तो मुद्रित होकर सर्व—विदित एवं सर्वत्र प्रचलित है। परन्तु उनसे पहले और पीछेके कई विद्वानों ने भी एकीभाव का हिन्दी पद्यानुवाद किया है, जिसका सर्व साधारण की तो बात ही क्या, विद्वानों तक को इसका पता नहीं है। स्वयं मुझे भी यहां सरस्वती भवन में आनेके पूर्व तक पता नहीं था। पर जब हस्तलिखित गुटकों का पारायण प्रारम्भ किया, तो दो अन्य विद्वानों के द्वारा किये हुए पद्यानुवाद दृष्टि गोचर हुए। उनमें एक है पं० हीरानन्दजी रचित और दूसरा है पं० द्यानतरायजी रचित। इनमें पं० हीरानन्दजी ने मूल काव्य का सर्व भाव प्रदर्शित करने के लिए प्रत्येक श्लोक का २–२ छन्दों में अनुवाद किया। पर पं० द्यानतराय जी ने मूल श्लोक का भाव एक ही छन्द में व्यक्त किया है। दोनोंकी दोनों ही रचनाए अपने ढंग से अनूठी हैं। पाठकों की जानकारी के लिए हम आगे सबसे पहले मूल संस्कृत श्लोक दे रहे हैं, उनके नीचे पं० भूधरदासजी-निर्मित पद्य, उसके नीचे पं० हीरानन्दजी–विरचित छन्द और सबसे नीचे पं० द्यानतरायजी रचित चौपाई दे रहे हैं, ताकि पाठ करने वालों को मूलके साथ किये गये पद्यानुवादोंके मिलानका अवसर मिले और प्रत्येक की विशेषताको हृदयङ्गम किया जा सके। भाषापद्यकारों के संक्षिप्त परिचय आगे कभी यथावसर दिया जायगा।

१ वादिराज

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो
घोरं दुःखं भव–भवगतो दुर्निवारः करोति
तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे भक्तिरुन्मुक्तये चे-
ज्जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽपरस्तापहेतुः

२ भूधरदास

वादिराज मुनिराजके चरण कमल चित लाय।
भाषा एकीभावकी करूं स्व-पर-सुखदाय॥
जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी

सो मुझ कर्म प्रबन्ध करत भव भव दुख भारी।
ताहि तिहारी भक्ति जगत-रवि ! जो निरवारै,
तो अब और कलेश कोन सो नाहिं विदारै ॥१॥

३ हीरानन्द-

वादिराज मुनिराज को, बख्यौ सुहित उदगार।
स्व-पररूप अनुभव-कथा, कहत स्व-पर हितकार
एकी भाव भयो मुझमांहि, कर्मप्रबन्ध आदि कहुँ नांहि
सो भव-भव गति दुख करैं, दुर्निवार वारौ नहि परै
ताके और दुःखको जिनसूर, दूर करो तुझ भक्तिव चूर
ते दुख कौन ताप करि भूरि, जो न भगति अब करिहें दूर ॥२॥

४ द्यानतराय

वन्दौ श्री जिनराज पद, रिद्ध-सिद्धि-दातार।
विघन-हरण मंगल-करण, दारिद-दरण अपार ॥
मिथ्याभाव करम वन्ध भयो, दुर्निवार भव भव दुख दयो
सो सब नाश भगति तें होय, रहे न प्रभू दुख कारण कोय

२

ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं
त्वामेवार्हज्जिनवर चिरं तत्त्वविद्याभियुक्ताः।
चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्भासमान-
स्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमोष्टे

भूधरदास

तुम जिन ज्योति स्वरूप दुरित अंधियारि निवारी,
सो गणेश गुरु कहें तत्त्व विधाधन धारी।
मेरे चित्तघरमांहि वसो तेजोमय यावत,
पाप-तिमिर अवकाश तहां सो क्यों करि पावत ॥२॥

हीरानन्द

जोतिरूप पापातम नास, तुम जिनवर विचि मुझि अवभास
मेरे चित् मन्दिर में आय, प्रगट विभासमान सुखदाय
तौ कहि भास हृदें कैसे बनें, पाप-अंधार वसत जो भनें
सो भासहि निहचैं हि परवानि, आपु आपु परमपदजानि

द्यानतराय

ज्ञानरूप अघ-तम छयकार, अघट-प्रकाशक हैं गुणधार
मो मन-भवन वसै तुम नाम, तहां न भरम-तिमिरकोकाम

३

आनन्दाश्रुस्नपितवदनं गद्गदं चाभिजल्पन्,
यश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमन्त्रैर्भवन्तम्
तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्या-
न्निष्कास्यन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः

भूधरदास

आनन्द आंसू वदन धोय तुमसों चित सानै
गदगद सुरसों सुयशमंत्र पढ पूजा ठानै।
ताके बहुविध व्याधि-व्याल चिरकाल-निवासी
भाजैं थानक छोड देह बांवइ के वासी ॥ ३ ॥

हीरानन्द

आनंद आसू धोय मुख नैन, जो गदगद भासें जिनवैन
स्तोत्र मंत्रकरि दिढता धरैं, श्री जिनराज-रूप अनुसरैं
ताको, भ्यास करत चिरकाल, देहरूप बांवइके व्याल
बंध रूप जे वसहिं अनादि, ते भज जाहिं, न उपजैंसादि

द्यानतराय

पूजा गदगद मन वच लाय, करों हरष-जल वदन सुहाय
विषयव्याल चिरकाल अपार भाजैं तज तन बांबइद्वार

—क्रमशः

स्मरण रखिये जैन धर्मके स्वाध्याय करने योग्य अनुपम जैन ग्रन्थ सुलभ और सस्ते मूल्य में आपको इस पते पर मिल सकेंगे।
श्री शांतिसागर जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी संस्था
श्रीमहावीरजी
(सवाई माधोपुर राज०)

एकीभावस्तोत्र

(१) एकीभावं गत इव मया
जो जाते एकीभाव

(२) ज्योतीरूपं दुरित निवह-
तुम जिन ज्योतिस्वरूप

(३) आनन्दाश्रुस्नपित वदनं
आनंद आंसू वदन धोय

(४) प्रागेवेह त्रिदिवभवना-
दिवितें आवन हार भये

(५) लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्
प्रभु सब जगके बिन हेतु

(६) जन्माटव्यां कथमपि मया
भव-वनमें चिरकाल भ्रम्यो

(७) पादन्यासादपि च पुनतो
श्रीविहार परिभाव होत

(८) पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं
भव तेज सुख पद वसे

(९) पाषाणात्मा तदितरसमः
मानथंभ पाषाण आन

(१०) हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्
प्रभु-तन-पवित परस

(११) जानासि त्वं मम भव-भवे
जनम जनमके दुःख सहे सब ते
(१२) प्रापद्दैवं तव नुति पदै-
मरण-समय तुव नाम-मंत्र
(१३) शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते
जो नर निर्मल ज्ञान मान शुचि
(१४) प्रच्छन्नः खल्वयमघमयै-
शिव-पुर केरो पंथ पाप-तमसों
(१५) आत्मज्योतिर्निधिरनवधि-
कर्म-पटल-भू-मांहि दबी
(१६) प्रत्युत्पन्ना नयहिमगिरेरायता
स्याद्वाद-गिरि उपजि मोक्ष-सागर
(१७) प्रादुर्भूतस्थिरपदसुख त्वामनु-
तुम शिव सुखमय प्रगट करत
(१८) मिथ्यावादं मलमपनुदन्
वचन-जलधि तुव देव, सकल
(१९) आहार्येभ्यः स्पृहयति परं
जो कुदेव छवि-हीन वसन
(२०) इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां
सुरपति सेवा करें कहा प्रभु

(२१) वृत्तिर्वाचामपरसदृशी न त्वमन्येन

बन्धनजाल जड़रूप आप

(२२) कोपावेशो न तव न तव क्वापि

कोप कभी नहिं करो प्रीति

(२३) देव स्तोतुं त्रिदिवगणिकामंडली

सुरतिय गावें सुयश सवगीति

(२४) चित्ते कुर्वन्निरवधिसुखज्ञान

अतुल चतुष्टय रूप तुम्हें जो

(२५) भक्तिप्रह्वमहेन्द्रपूजित पद

अहो जगत्पति, पूज्य, अवधि-

(२६) वादिराजमनु शाब्दिकलोको

वादिराजमुनि तें अनु

— ० —